INTERNATIONAL JOURNAL OF NOVEL RESEARCH AND DEVELOPMENT (IJNRD)
© 2026 IJNRD | Volume 11, Issue 2, February 2026 | ISSN: 2456-4184 | IJNRD.ORG

नेपाल का जोसमनी संत साहित्य

डिल्लीराम शर्मा संग्रौला
विभागीय प्रमुख
संस्कृत, हिंदी तथा पत्रकारिता
पद्मकन्या बहुमुखी कैंपस, काठमांडू

सार

नेपाल एक सुन्दर देश है जो हिमालय की गोद में बसा हुआ है। यह देश सांस्कृतिक रूप से समृद्ध है। यहाँ विविध जात-जाति, भाषाभाषी, हिन्दू-बौद्ध-किरात सभी धर्म के लोग आपस में मिल कर रहते हैं। नेपाल को बहुजातीय, बहुभाषिक, बहुधार्मिक, बहुसांस्कृतिक मुल्क कहा जाता है। नेपाल के जोसमनी संतों का साहित्य पर्याप्त है। जोसमनी सम्प्रदाय हिंसा और जाति कुल के भेदभाव के विरुद्ध ही समाज में अस्तित्व में आया है। जोसमनी सम्प्रदाय में मन, वचन और कर्म से अहिंसा पर जोर दिया जाता है। ईश्वरीय आराधना को सहज और सर्वस्वीकार बनाना, समाज के पुराने रूढीगत चिन्तन को दूर करना, निर्गुण अस्तित्व को ग्रहण करना, विभेद, भ्रष्टाचार, आडम्बर, जाति प्रथा आदि का यह मत प्रत्यक्ष विरोध करता है। प्रचलित धार्मिक विश्वास में जब रूढीवादी और अनैतिक विश्वास को स्थान मिलता है, तब समाज का एक जागरूक हिस्सा अलग धार्मिक चिन्तन की ओर उन्मुख हो जाना स्वाभाविक है, जोसमनि सम्प्रदाय इसी का प्रतिफल है। इस सम्प्रदाय के सन्तों की भाषा सधुक्कडी है क्योंकि ये घुमक्कड होते हैं। नेपाल में जोसमनी सन्तों का विपुल साहित्य है। नेपाली विद्वानों ने भी जोसमनी सन्तों से नेपाली भाषा में पर्याप्त योगदान पहुँचने की बात कही है। नेपाल का हिन्दी साहित्य का आरंभ जोशमनी सन्तों की वाणी से ही माना जाता है। जनकलाल शर्मा ने जोसमनी संतों के बारे में पर्याप्त खोज की हैं। प्रस्तुत लेख में जोसमनी संतों और उनके द्वारा साहित्य में किए गए योगदान के बारे में विश्लेषण करना ही इसका उद्देश्य है।

बीज शब्द : जोसमनी, इहलोक, काष्ठमण्डप, मच्छिन्द्रनाथ, गोरखनाथ, काव्यात्मकता।

1. विषय प्रवेश

नेपाल संतों की ही भूमि है। यहाँ संतों की लंबी परंपरा है। जोसमनी संत परंपरा केवल एक अमूक जाति की परंपरा नहीं है। इस परंपरा में नेपाल के विभिन्न जात-जाति, भाषा-भाषी समाहित होते गए। मोक्षमंडल मगर जाति के शिष्य थे, शेषधर गुरुंग जाति के शिष्य थे, माया मंडल सुनुवार जाति के शिष्य थे और प्रेम दिल ब्राह्मण जाति के शिष्य थे।

जोसमनी संत परंपरा का प्रचार नेपाल, भारत का दार्जिलिंग होते हुए बर्मा तक हुआ है। इस परंपरा ने परलोक से भी इहलोग को महत्व दिया है, इसी तरह सामाजिक कार्य को महत्व दिया है और वैराग्य से भी निर्माण कार्य को प्राथमिकता दी है। यह परंपरा केवल एक आदर्शवादी दर्शन न होकर एक साहित्यिक दृष्टि से भी महत्व रखती है।

2. जोसमनी संत संप्रदाय

महात्मा, साधु, भक्त आदि शब्द सामान्यतः संत शब्द के पर्याय के रूप में प्रयोग किया जाता है। वास्तव में संत का अर्थ है - विषय वासना से निरपेक्ष रहना, सत्कर्म करना और किसी के साथ बैर भावना न रखते हुए जीना। संत की परिभाषा यही है जो व्यापक है। इस परिभाषा के अनुसार सभी प्रकार के साधु, महात्मा व भक्त संतों के अंदर समा जाते हैं। परंतु बाद में संत शब्द का प्रयोग निर्गुण धारा के भक्तों के लिए प्रयोग में आने लगा। फलस्वरुप संत शब्द निराकार ब्रह्म की उपासना करने वाले भक्तों के अर्थ में रूढ़ होता दिखता है।

जोसमनी संत परंपरा के प्रभावकारी व्याख्याता शशिधर पौडेल थे। वे नेपाल को एकीकरण करने वाले महाराज पृथ्वी नारायण शाह के समकालीन थे। पृथ्वी नारायण शाह के प्रसिद्ध भारदार धौकलसिंह बस्नेत, शशिधर से दीक्षित होकर दौकल दास नाम से प्रसिद्ध हुए थे, उसी तरह राजा रणबहादुर शाह शशिधर के संगत से प्रभावित होकर स्वयं को स्वामी निर्गुणानंद घोषित किए थे। नेपाल के जनरल रणवीर सिंह थापा भी जोसमनी संत परंपरा स्वीकार करके शशिधर के शिष्य बने थे। जनक लाल शर्मा के अनुसार शशिधर बिहार के शाहाबाद जिले के किसी गांव में रहने वाले भारत के कबीर दास के बाद के हठयोगी दरिया साहब नामक व्यक्ति के संगत में थे।

निर्गुण भक्त व संतों की वाणी प्राय: कविता के रूप में व्यक्त हुए हैं। ऐसी ही वाणी व कविता को संत काव्य कहा गया है। संत काव्य की दृष्टि से देखे तो नेपाल में जोसमनी संतों की कविताएं उपलब्ध हैं।

जोसमनी संत संप्रदाय को नेपाल की संत परंपरा मानी जाती है। परंतु जोसमनी शब्द के बारे में विद्वानों का कहना है कि संभवत: इसके आदि प्रवर्तक का नाम जोसमनी था। इस मत के समर्थक 'ओम नमो जोसमनी चरणारविन्देभ्यो नमः' जैसे वाक्य के आधार में जोसमनी किसी व्यक्ति विशेष का नाम होने के कारण ही ऐसा अनुमान लगाया जाता है। दूसरा मत व्युत्पत्तिमूलक है। इस शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार से किया है ज्योतिर्मनी, ज्योतिष्मि, जोस्मनी, जोसमनी। यह व्युत्पत्ति ठीक ही प्रतीत होता है क्योंकि जोसमनी परंपरा के संत ज्योति को महत्व देते हैं और ज्योति की ही उपासना करते हैं ।

नेपाल की संत परंपरा में चौरासी सिद्धों का नाम अग्र स्थान में आता है। वे सहजयान के प्रचारक तथा शिव मार्गी थे। इन्हें जोसमनी संत परंपरा के अंतर्गत रखा जाता है। शशिधर भारत उड़ीसा के जगन्नाथ धाम में भी पहुंचे और वहाँ वे चौरासी सिद्धों, बज्रयान और हठयोगी संतों के संपर्क में आए। हिंदी साहित्य में चौरासी सिद्धों का वर्णन है। हिंदी साहित्य के आदिकाल में सिद्ध साहित्य पर विस्तार से वर्णन मिलता है। सिद्ध साहित्य के कई कवि नेपाल के माने जाते हैं । राहुल सांकृत्यायन ने अपनी पुस्तक 'हिंदी काव्य धारा' में कुकुरीपा के दो पद दिए हैं । उन्होंने भी उन्हें नेपाल के कपिलवस्तु का माना है। उनकी बात को डॉक्टर धर्मवीर भारती ने भी अपनी पुस्तक `सिद्ध साहित्य´ में स्वीकारते हुए उन्हें कपिलवस्तु का ब्राह्मण बताया है। नेपाल के संत साहित्य के विशेषज्ञ जनक लाल शर्मा ने भी कुकरीपा को कपिलवस्तु का ही बताया है। चौरासी सिद्धों में से एक सिद्ध लुईपा का नाम भी सम्मान के साथ लिया जाता है, जिन्होंने काठमांडू में कहीं दिनों तक अपना जीवन बिताया है। ऐसा कहा जाता है कि काष्ठमंडप इन्हीं के द्वारा बनाया गया है और काष्ठमंडप से ही धीरे-धीरे काठमांडू बना है। ऐसा कहा जाता है कि एक ही वृक्ष के काष्ठ से यह मंडप बनाया गया था। कहा जाता है कि मछिंद्रनाथ और गोरखनाथ भी नेपाल में आए थे। इसी प्रकार से सिद्ध कर्णरीपा, सिद्ध जालंधर के भी यहां आने के प्रसंग मिलते हैं। इन सारी बातों से यह पूर्णत स्पष्ट होता है कि किसी समय में नेपाल सिद्धों और नाथों का केंद्र रहा है (वर्मा, संजीता पृ.51) । सन

1907 में अनुसंधानकर्ता महामहोपध्याय हर प्रसाद शास्त्री को नेपाल दरबार पुस्तकालय में सिद्धों के पचास पदों का एक संग्रह प्राप्त हुआ था। इन पदों की गायन परंपरा काठमांडू घाटी की नेवार जाति में आज के दिनों में भी प्रचलित है जिसे चर्या गीत कहा जाता है। सिद्धों की इन साहित्यिक रचनाओं ने हिंदी, नेपाली तथा संत साहित्य को प्रभावित किया है। सिद्धों और नाथों की विस्तृत अध्ययन एवं विश्लेषण जनक लाल शर्मा ने `जोसमनी संत परंपरा एवं साहित्य´ नामक पुस्तक में किया है। उन्हें इस पुस्तक में मदन पुरस्कार भी मिला है। अतः नेपाल का जोसमनी संप्रदाय में सिद्धों और नाथों का प्रभाव देखा जाता है। जोसमनी संप्रदाय की भाषा में हिंदी का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है। मछिंद्रनाथ और गोरखनाथ का मंदिर भी नेपाल में है। आज के दिनों में भी प्रत्येक वर्ष सेतो मछिंद्रनाथ (श्वेत मछिंद्रनाथ) और रातो मछिंद्रनाथ (लाल मछिंद्रनाथ) की रथ यात्रा बड़े धूमधाम से की जाती है।

योगी नरहरिनाथ ने ``इतिहास प्रकाश´´ में नाथ संतों की अनेक रचनाएं संकलित की हैं। नाथ और सिद्धों की रचनाएं नेपाल के अनेक देवस्थलों, मठों उनके अनुयायियों के पास सुरक्षित हैं। इस भाषा की उत्कृष्ट रचना `दंगी शरण´ है जो दोहा-चौपाई और छंदों में रचित है और जिसमें दांग (नेपाल का एक जिला) राज्य की स्थापना की कथा वर्णित है (राकेश रामदयाल 2003 पृ.3)।

हालांकि नेपाल की जोसमनी संत परंपरा नेपाल की मौलिक परंपरा है। परंतु हिंदी साहित्य की निर्गुण संत परंपरा का इसमें प्रभाव दिखता है क्योंकि कबीरदास की उलटबासियाँ, साखियां, सधुक्कड़ी भाषा का नेपाल के इस संत परंपरा के शशिधर, ज्ञान दिलदास, संत अभयानंद के साखियों और उलटबासियाँ में कुछ समानताएं मिलती हैं।

नेपाल में जोसमनी संत परंपरा पृथ्वी नारायण शाह द्वारा नेपाल एकीकरण से पहले से ही प्रचलित में थी। जोसमनी शब्द का प्रथम प्रयोग करने के कारण और अपने शिष्यों के नाम के पीछे दिल शब्द रखने की परंपरा रखने के कारण संत शशिधर को इस संप्रदाय के प्रमुख गुरु कहा जाता है। परंतु इनसे पूर्व भी कई संत थे।

जोसमनी संप्रदाय में पुरुष संत के नाम के पीछे दिल व दिलदास और नारी संत के नाम के पीछे दिलमाई जोड़ने की परंपरा है। दिल का समानार्थक शब्द मन से है और निर्गुण भक्ति में ईश्वर का रूप निराकार है। ईश्वर का साक्षात्कार मन से होता है इसीलिए दिल शब्द को जोड़ा गया है। यह संप्रदाय मन के योग को ज्यादा बल देता है।

इस संप्रदाय के संतों की भक्ति अधिकांश निराकार और अव्यक्त रूप में होते हुए भी साकार और व्यक्त रूप में भी देखा जाता है । इसीलिए जोसमनी संत निर्गुण और सगुण दोनों रूप में मिलते हैं। निराकार ईश्वर के साथ ही शिव, विष्णु, राम और कृष्ण की भी स्तुति मिलती है। जोसमनी संत केवल नाथपंथी नहीं शैव और वैष्णव भी हैं। इस संप्रदाय के प्रथम संत हरिश्चंद्र प्रथम का समय अज्ञात है। नेपाल के जोसमनी संत कविता का बड़ा भंडार है। संत कविता की विपुल भाषा मुख्यत सधुक्कड़ी है। यह एक प्रकार की मिश्रित भाषा है। हिंदी साहित्य के भक्तिकालीन कवि कबीरदास ने भी इसी सधुक्कड़ी भाषा में अपनी काव्य की रचना की थी। इनकी भाषा आकर्षक नहीं होते हुए भी विचार और भाव महत्वपूर्ण होते हैं।

संतों की कविता में ज्ञान योग, हठयोग और कर्म योग के साथ ही वैष्णव संप्रदाय का प्रभाव भी देखा जाता है। इन्होंने मन की स्वच्छता को ज्यादा महत्व दिया है। ये अंधविश्वास और बाहरी आडंबर के कट्टर विरोधी हैं। इनकी रचना समाज के निम्न वर्गों को जागरूक करने के साधन के रूप में निर्मित हुआ है।

व्यावहारिक दृष्टिकोण से रचित संत कविताओं में काव्यात्मकता का अभाव होने पर भी तत्कालीन समाज में उनकी उपयोगिता निसंदिग्ध है। आगे कुछ जोसमनी संतों के बारे में मैं वर्णन करना चाहता हूं

2.1. **शशिधर**

शशिधर पौडेल जोसमनी संत परंपरा के प्रभावकारी व्याख्याता थे। राजा पृथ्वी नारायण साह ने इनके लिए एक कुटी का निर्माण कर दिया था। इन्होंने चारों ओर अपने शिष्यों को भेजा था। इन्होंने रण बहादुर शाह (निर्वाणानंद) और भीमसेन थापा के भाई रणवीर सिंह थापा (अभयानंद) को भी दीक्षित किया था। संगत से उनका भाई रणवीर सिंह भी साधु बनने के लिए अग्रसर हो रहे थे। इसलिए उन्होंने शशिधर को काठमांडू घाटी से बाहर पूर्व की ओर भेज दिया था। यहां तक कहा जाता है की जंग बहादुर भी इनसे प्रभावित थे।

शशिधर ने मुख्य सधुक्कड़ी भाषा में रचनाएँ की है। यहां उनकी भक्ति से संबंधित कुछ पंक्तियां दी गई है -

भक्ति शब्द कहीं जाऊं
पहले लिऊँ गुरु के नाऊँ
सत्य वचन अधीन गुरु के नाम गाई
मन गद गद तन पुलकावली राम नाम समाई।

शशिधरने कबीर की तरह कुछ उलटबाँसिया की भी रचना की है -

बिना पुरुष रति रितु धरै बिना बीज को बीज
भरै बिना गर्भ को मिलै बिना नाम को चिज । (गोप पृ. 138)

2.2. जनकपुर और संत साहित्य

जनकपुर धाम राजा जनक की मिथिला राज्य की राजधानी है। यह धाम ऐतिहासिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। यहाँ के कला, साहित्य संस्कृति विश्व में चर्चित है। जनकपुर राजा जनक, सीता माता, याज्ञवल्क्य, मैत्रेयी आदि की पवित्र भूमि है।

जनकपुर के सन्त कवियों ने समाज के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह किया है। हिन्दी साहित्य में सिद्ध एवं नाथ सन्तों की चर्चा है उनमें से एक कवि कुकुरीपा का जन्म सन् 840 में नेपाल के पश्चिमी भाग के तौलीहवा में हुआ था। सिद्ध साहित्य कई कवि नेपाल के माने जाते हैं।

2.3. **संत सूकिशोर दास**

नेपाल के हिन्दी साहित्य विकास में जनकपुर के संत साहित्य की भूमिका भी उल्लेखनीय है। जनकपुर के अन्वेषक सिद्ध सन्त सुर किशोर दासजी द्वारा 350वर्ष पूर्व रचित `मिथिला विलास´ एक महत्वपूर्ण कृति है। प्रस्तुत कृति में जनकपुर की तत्कालीन सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक अवस्था का चित्रण है। इस कृति में वात्सल्य भाव से ओतप्रोत कवित्त, सवैले, गीत, छप्पय संग्रहित हैं। इनकी कई कृतियां बताई गई हैं- आधुनिक जनकपुर का इतिहास जानकी मंदिर के संस्थापक सन्त सुरकिशोर दासजी से माना जाता है । सूर किशोर दास जी के विषय में विस्तृत दस्तावेज उपलब्ध नहीं है। यहां के संतों ने अपने गुरु से जो सुना उसी के आधार पर यह कहा जाता है । सन्त सुरकिशोर दासजी ने मिथिला विलास लिखा है, यही एक प्रमाणिक दस्तावेज है। इसमें जनकपुर के कुछ तीर्थ के विषय में वर्णन किया गया है। सन्त सुरकिशोर दासजी का जन्म भारत के मध्य प्रदेश के लोहागढ़ में हुआ था और वह वही के किसी एक मंदिर में पूजा पाठ किया करते थे। वे सीता के वात्सल्य भाव के रूप में पूजा करते थे। वे सीता को अपनी बेटी की

तरह मानते थे। उन्होंने सीता की एक मूर्ति बनाई थी और जहां भी जाते थे सीता को साथ में ले जाते थे। सीता की सेवा से भी वे उतना प्रसन्न नहीं दिख रहे थे। एक दिन उन्हें लगा कि सीता की सेवा वहीं हो सकती है जहां इनका जन्म हुआ था। परंतु पौराणिक काल का जनकपुर कहां है इसके बारे में मैं कैसे पता करूं उनके मन में जिज्ञासा थी। एक दिन उन्होंने सीता से पूछा कि तुम्हारी राजधानी कहां है तो सीता ने सपने में जवाब दिया कि आप पूर्व की ओर जाइए और जहाँ नदियों का संगम स्थल हो वहाँ पहुँचते ही आप को अपना उत्तर मिलेगा। उन्होंने सीता की मूर्ति को अपने घर में ही छोड़के उनके अनुसार निकल पड़े। धूप, बरसा, दुख, कष्ट सहते हुए निरंतर यात्रा में चलते रहे और जब वे जनकपुर पहुंचे तो स्नान करने के बाद उन्हें थकान महसूस हुई और एक नीम के वृक्ष के नीचे आराम करने लगे। विश्राम के बाद जब वह आंख खोलते हैं तो वह आश्चर्य चकित हो जाते हैं कि उन्होंने सीता की मूर्ति को अपने घर में छोड़ा था परंतु वह मूर्ति अब उनके सामने में है। उन्हें लगा कि यही सीता की जन्म भूमि है और वहीं उन्होंने एक छोटी सी झोपड़ी बनाई और सीता के नाम के भक्ति गीत गाते हुए अपना जीवन बिताने लगे। उस समय उन्होंने एक जागरण का कार्य किया और जनकपुर की खोज की। आज के दिनों तक जानकी मंदिर सूरकिशोर दास के पंथ द्वारा ही संचालित है। उनकी एक कविता यहां प्रस्तुत है

कलि काल बड़ो दल साजि चढो, सब वेद पुरान भये शिथिला।
साधु कि ठौर असाधु बवे, सुथिला जेही ठौर भए कथिला।
वरणाश्रम धर्म विचार गये, द्विज तीरथ देव भये मिथिला।
मिथिला कलि काल ग्रसी सगरी, तब जानकी जू झट है उधरी।
सत्संग विलास कथा चरचा, नित आनंद मंगल होत झरी ।।

हिन्दी साहित्य के विकास में जनकपुर के संतों की भूमिका सराहनीय है। कईं अन्य ऐसे संत हैं जिन्होंने कृतियाँ लिखकर हिन्दी साहित्य को पल्लवित किया है।

2.4. स्वामी राम प्रिया शरण

'सीतायन' प्रसिद्ध प्रबंध काव्य की रचना जनकपुर में ही हुई थी। इसके रचयिता है श्री 108 श्रीवर स्वामी राम प्रिया शरण जी। इन्होंने सकल भक्तजनों के विनोदार्थ इसे बड़े परिश्रम से बनाया है जिसमें श्री जगत जननी श्री सीता जी महारानी के बाल चरित्र का वर्णन है। इस ग्रंथ के मधुर माल कांड की कुछ पंक्तियां इस प्रकार है -

श्रीसीता श्रीराम युग चरण कमल करि ध्यान
वरनत भाषा में कछुक वेद पुराण प्रमान।।1
नवल किशोरी जानकी नवल लाल रघुनाथ
नवल चरित्र तिनको कहां नवल नेह के साथ।।2
सिया चरण अनुराग मोहिं सिय बिनु कछु न सोहाहिं
ताते सीयारण कहौं रामायण जेहि माहि।।3
सिया सिया रसना रटे हटे न एक निमेष
सिया महल तब सहलते परे विमल दृग देख ।।4(डॉ . संजीता वर्मा, पृष्ठ 58)।"

इस प्रकार से नेपाल में संत परंपरा विकसित हुई है और समाज को एक सूत्र में पिरोने का काम हुआ है।

3. निष्कर्ष

जोसमनी संत निर्गुण भक्ति के माध्यम से मानव जाति को जागरुक करने के कार्य में समर्पित थे। सगुण भक्ति की प्रबलता के कारण समाज में गलत प्रथा व्याप्त थीं। ऊँच-नीच जैसे मतभेद के कारण समाज में लोग कष्टपूर्ण जीवन जीने में विवश थे। ऐसी अवस्था में जोसमनी संत धार्मिक उद्घोष के माध्यम से जनसाधारण को चेतनशील बनाने और अध्यात्म के माध्यम से अपने जीवन सुधार की उपाय बताते थे। इन्होंने अपनी कविता और भजन से लोगों को जोडने का कार्य किया है। जातपात, लिंग, वर्ण, सम्प्रदाय के आधार में समाज में किए गए भेदभाव के ये विरोधी थे। इनका कहना था कि मनुष्य द्वारा धर्म के नाम पर किए जाने वाले सती प्रथा, दासप्रथा, गलत पाण्डित्य, दान पुण्य, मूर्ति पूजा, वेष परिवर्तन, भेदभाव और छुवाछुत ये सब मानवघाती हैं। इन्होंने पाखण्डीपन को अस्वीकार किया और ध्यान, धारणा और समाधि को महत्व दिया। ये हठ विधि को विशेष महत्व देते थे। अध्यात्म, योग, वैराग्य, समानता, सहजता, परिष्कार और मानवता इनके साहित्य और भजन की विषय वस्तु हैं। ये मानवता की रक्षा, आडम्बर का विरोध, अभिचार में सुधार को महत्त्व देते थे। सन्त परम्परा में गुरु की महत्ता को स्वीकार जाता है। जोसमनी संत और भारत के कबीर पन्थ में समानता देखी जाती है। सिद्धों-नाथों से कबीरादि प्रभावित माने जाते हैं और नेपाल का जोसमनी सन्त भी सिद्धों और नाथों की परम्परा से अछुते प्रतीत नहीं होते हैं।

संदर्भ सूची

1. गोप, सूर्यनाथ (ई.स 1994), नेपाल में हिंदी और हिंदी साहित्य, किताब महल, इलाहाबाद।
2. मिश्र, कृष्णचंद्र (ई.स 1995), नेपाल में हिंदी, विद्या विहार, नई दिल्ली।
3. राकेश, रामदयाल (ई.स. 2003), नेपाल के हिंदी लेखक, प्राच्य प्रकाशन, वाराणसी।
4. वर्मा, संजीता (ई.स. 2021), नेपाल की हिंदी कल आज और कल, अपराजिता ग्रूप प्रालि. काठमांडू।
5. शर्मा, जनकलाल(वि.स. 2020), जोसमनी संत परंपरा और साहित्य, रॉयल नेपाल एकेडेमी, काठमांडू।

• **Copyright & License:**
© Authors retain the copyright of this article. This work is published under the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0), permitting unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.